International Journal of Applied Research 2016; 2(1): 382-384

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2016; 2(1): 382-384
www.allresearchjournal.com
Received: 26-11-2016
Accepted: 27-12-2016

डॉ. राजकुमार नाइक
प्रो0 स्नातकोत्तर हिंदी विभाग
दक्षिणी हिंदी प्रचार सभा, मद्रास।

वंदना रानी
पी एच0 डी0 शोधार्थी
दक्षिणी हिंदी प्रचार सभा, मद्रास।

डॉ. रमेश कुमार
हिंदी विभाग, जे0सी0डी0
विद्यापीठ सिरसा हरियाणा।

Correspondence
डॉ. रमेश कुमार
हिंदी विभाग, जे0 सी0 डी0
विद्यापीठ सिरसा हरियाण।

यशपाल के उपन्यासों में विस्थापन की पीड़ा

डॉ. राजकुमार नाइक, वंदना रानी, डॉ. रमेश कुमार

प्रस्तावना

जो समाज उन्नति करना चाहता हो उसके लिए आवश्यक हो जाता है कि वह अपनी सामाजिक समस्याओं के प्रति जागरूक रहे। ''व्यवहार के जिन नमूनों अथवा परिस्थितियों को किसी समाज के बहुत से सदस्य आपत्तिजनक अथवा अवांछनीय मानते हों वे ही सामाजिक समस्याएँ है। इन सदस्यों की मान्यता है कि इन समस्याओं से निपटने के लिए तथा इनके कार्यक्षेत्र को कम करने के लिए सुधार–नीतियाँ, कार्यक्रम तथा सेवाएं आवश्यक होती हैं।''[1] इस परिभाषा के अनुसार समूह जिन प्रतिकूल परिस्थितियों को निन्दनीय अथवा अवांछनीय न कहे वे सामाजिक समस्याएँ नहीं समझी जाती। उदाहरण के लिए – यदि समुदाय जुआ खेलना बुरा या आपत्तिजनक माने तो यह सामाजिक समस्या नहीं समझा जाता। फिर भूमि–कटाव, जल–प्लावन, आँधिया, अग्निकाँड आदि प्राकृतिक और हृदय रोग, कैंसर रोग तथा दूसरे शारीरिक रोग आदि जीव विज्ञान संबंधी कुछ समस्याएँ भी हैं – जिनको सामाजिक समस्याओं की अपेक्षा हम अधिक सरलता से सुलझा लेंगे, परंतु हमारे लिए इन सबको बदलना अथवा नियंत्रण में लाना एक बहुत ही प्रबल तथा हठी समस्या है। इस पर गहन विचार किया गया है और इसके संबंध में बहुत–सा साहित्य लिखा जा चुका है। तथापि आज से 60 वर्ष पूर्व की अपेक्षा आज बाल अपराध के अनुपात बहुत ऊँचे हैं। [2]

परंतु मलेरिया तथा दूसरे संचारी रोगों की स्थिति यह है कि चिकित्साशास्त्र के अनुसंधान द्वारा ये हमारे पर्याप्त नियंत्रण में हैं। इसी प्रकार समकालीन नागरिक समाज में व्यस्क–अपराध, संप्रदायिकता, शराबखोरी, अफीम आदि की लत, जुआ खेलना, पागलपन तथा जातिगत कठिनाईयाँ आदि दूसरी सामाजिक समस्याएँ हैं, जो विस्थापन के नियंत्रण का विरोध करती हैं। 'झूठा–सच' उपन्यास की पात्र बंती तारा को सांत्वना देते हुए समझाती है 'बहिना जीना–मरना क्या मनुख के अपने हाथ की बात है!'' बंती बोली, ''तु क्या समझती है कश्ट मुसीबत तूने ही झेली है? बहिना, तेरी तरह साबुत–सलामत तो यहाँ एक भी नहीं पहुँची। तुझे भी देख रहे हैं, हमने भी सहा है, दूसरों को भी देखा है। मनुख का तो स्वभाव होता है कि कम दुःख पड़े तो उसे और अधिक मानता है। तू दूसरों को देख! तुझे तो बस उठा लाये हैं। मुँह पर जरा रगड़ लगी है। इतना लिहाज तो उन लोगों ने अपनी माँ–बहिन का भी नहीं किया होगा। तुझे दूसरों की बीती मालूम नहीं न !'' फिर तारा कहती है, ''बहिन जी, रोग और मौत का क्या है, मौत आती ही कहाँ है? मैं तो मरने का यत्न करके हार गई। मर ही जाऊँ तो क्या चाहिए?'' [3]

यशपाल के उपन्यासों में समाजशास्त्र के विज्ञान का उपेक्षित रहा। अर्थशास्त्र का स्नातकोतर स्तर पर अध्यापन पहले–पहल केवल सन् 1926 में बम्बई विश्वविद्यालय में आरंभ किया गया था। 'टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल सायन्सेज' ने पहला 'ग्रेजुएट स्कूल ऑफ सोशल वर्क, 1936 में चलाया। यशपाल भी इनसे प्रभावित रहे 'झूठा–सच' भाग–1 में शिविरों में आपसी कलह एवं भूख का चित्रण देखिये– ''जब बुढ़िया रोटी लेकर आती है तो सतवंती चार रोटियां उठा लेती है तब बंती बोली ''तूने चार क्यों ले ली? तेरा पेट क्या बहुत बड़ा है?'' बंती ने सतवंत को टोक दिया।

''हाँ–हाँ, बराबर–बराबर बाँट लो बेटियों ! तुम पाँच हो, मैं सबके लिए तीन–तीन ले आयी हूँ। भूखी रह जाती हो तो मैं दो–तीन ज्यादा ले आया करूँगी। रोटियाँ क्या तुमसे अच्छी हैं? पर क्या करूँ, वह हरामी दाम ही नहीं देता।'' बुढ़िया ने दुख प्रकट किया।

''हम छः हैं।'' बंती ने बुढ़िया को उत्तर दिया और सतवंत की ओर देखकर कहा, ''सबको बराबर–बराबर बाँट।'' [4]

बुढ़िया ने रोटियों की गठरी खोली। तारा अपने हिस्से की रोटियाँ पाने की आशा में उधर ही देख रही थी। सतवंत, बंती और दुर्गा में लड़ाई हो गयी। सतवंत और दुर्गा ने दो–दो रोटियाँ उठा ली थी। बंती उनसे यों रोटियाँ न लेकर बराबर–बराबर बाँटने को कह रही थी। बुढ़िया ने विवशता प्रकट करने के लिए अपने होंठो पर हाथ रखकर समझाया– ''बेटियों, तुम लड़ती क्यों हो ? सदके (बलिहारी जाऊँ), रोटियाँ क्या तुमसे अच्छी हैं? मैं तुम्हें भूखा थोड़े ही रखना चाहती हूँ। बेईमान

गफूरा पैसे ही नहीं दे गया था। तीन दिन बाद बस एक रुपया दे गया है। मैं आठ रोटियाँ ले आयी हूँ। मैं क्या करूँ ?''[5]

2. देश में व्याप्त भयानक गरीबी के कारण शिक्षाविदों का ध्यान सामाजिक समस्याओं की ओर तो नहीं, आर्थिक समस्याओं की ओर गया। इसलिए यशपाल का ध्यान केवल उन्हीं सामाजिक समस्याओं की ओर गया जिनका सम्बन्ध आर्थिक समस्याओं से था। उदाहरणार्थ– 'झूठा–सच' उपन्यास भाग–1 में ''नब्बू तारा के शरीर से उतारा हुआ जेवर चुपके–चुपके लेकर घर से बाहर निकल जाता है। [6] उस समय आर्थिक तंगी के कारण अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए लोग इस हद तक गिर जाते हैं कि वो दूसरों की स्त्रियों को भी रुपये–पैसे में बेचने से नहीं हिचकते।

3. महात्मा गाँधी और नेहरु जैसे कुछ राजनैतिक नेताओं ने जनता का ध्यान शराबखोरी, जातिवाद, महिलाओं की दशा आदि सामाजिक समस्याओं की ओर अवश्य आकर्षिक किया, परंतु ब्रिटिश सरकार की उदासीनता के कारण इस संबंध में अधिक काम नहीं किया जा सका। नेहरु अपने भाषण में कहते हैं–
''सब लोग जानते हैं, मैं भी जानता हूँ कि आप लोग बहुत तकलीफ में हैं इसीलिये मैं आप लोगों से मिलने और आपकी हालत देखने के लिए यहाँ हाजिर हुआ हूँ। कुछ ... अ ... ये ... ऐसी राजनीतिक तबदीलियाँ हमारे मुल्क में वाकया हुई हैं। जिनके .... ऐ .... जिनके अच्छे नतीजों के साथ–साथ बुरे नतीजे भी सामने आये हैं। यह तो आप सब लोग जानते हैं कि हम अगर अच्छे नतीजों को कबूल करते हैं तो बुरे नतीजों से भी नहीं बच सकते। वे नतीजे आपके सामने हैं। आप उन्हें देख रहे हैं लेकिन उनकी जिम्मेदार काँग्रेस पर या हमारी सरकार पर नहीं है। हालाँकि एक हद तक है और ... और हम कबूल करते हैं। हम ... हम जिम्मेदारी से डरते नहीं हैं। ... हम हम .... आपकी मुसीबत में पूरी मदद करना अपना फर्ज समझते हैं और ... और उसके लिये हम हर मुमकिन कोशिश कर रहे हैं। आप अपनी शिकायतें और तकलीफें हमारे सामने रखें। दूसरे किस आदमी से आप अपनी तकलीफें कहेंगे? सरकार और सरकारी अफसर आपकी तकलीफों को सुनेंगे और उन्हें दूर करने की हर मुमकिन कोशिश करेंगे। लेकिन आपको याद रखना चाहिये कि जैसा आपका यह छोटा–सा कैम्प है, इससे बहुत बड़े–बड़े कई कैम्प हमने दिल्ली में बनाये हैं। मुल्क में ऐसे सैंकड़ों कैम्प हैं। हमारे कन्धों पर बहुत बोझ है और जिम्मेवारी भी है। आपको भी सिर्फ अपनी जाती तकलीफों और मसलों को ही नहीं सोचना चाहिए। आज का जमाना बहुत अहम है। इस समय हमारा मुल्क और दुनिया एक बहुत अहम दौर से गुजर रहे हैं। हम पर मुल्क के हर आदमी पर बहुत बड़े–बड़े फर्ज आयद होते हैं। हमें उनकी तरफ भी नजर रखनी चाहिए। तंग निगाह से सिर्फ अपने जाती मसलों को ही नहीं देखना चाहिए। तो हम .... जय हिन्द !'' [7]
यशपाल जी ने गाँधीवादी विचारधारा पर कटाक्ष किया है जिसके प्रमाण हमें 'झूठा–सच' भाग–2 में भली–भाँति देखने को मिलते हैं। जिसका एक उदाहरण यह है– गाँधी जी के बारे में भी दो व्यक्ति आपस में बात कर रहे हैं – ''ये लीडर हमारे साथ दगा कर रहे हैं। मुसलमानों के लिए हिन्दुओं को कुर्बान कर रहे हैं। पाकिस्तान की सरकार को अपनी रिआया का ख्याल है। .... यह सब गाँधी की करतूत है। वह मुसलमानों का पीर बनना चाहता है। रोज रेडियो पर उन लोगों का हौंसला बढ़ाता है ..... ।'' [8]

''पाकिस्तान को रुपया नहीं देंगे।''
''गाँधी गद्दार है।'' [9]
''खून का बदला खून से लेंगे।''
''गाँधी को मर जाने दो।''
''गाँधी मुल्क का दुश्मन है।''
''मुसलमानों को बाहर निकालो।''
''कश्मीर हमारा है।'' [10]

4. विभाजन की सबसे बड़ी त्रासदी अन्न–संकट और बेकारी दूर करने की समस्या थी। ऐसी अवस्था में मंत्री शरणार्थियों की सहायता के लिए दस लाख रुपया प्रतिदिन का व्यय जारी रखने के लिए तैयार न थे। [11]
यशपाल ने अपने उपन्यासों में 'समाज–कल्याण' की धारणा से कुछ पात्रों द्वारा अपनी सामाजिक समस्याओं के निदान तथा उनका उपचार करने में रुचि ली। तारा के माध्यम से यशपाल ने लिखा है – तारा ने इंस्पेक्टर भानुदत्त के विरुद्ध खेमी माई की शिकायत को फाइल बनाकर सुपरिटेंडेंट साहब के यहाँ भेज दी। सुपरिटेंडेंट ने भानुदत्त की इन्कवारी पर मशीनें पाने वाले लोगों की लिस्ट मँगवायी और तारा को आदेश दिया कि सीनियर इंस्पेक्टर इन्द्रनाथ के साथ स्वयं जीप पर जाये और इन्कवारी करे कि जिन लोगों को मशीनें दी गयी हैं, उनके पास मशीनें हैं या नहीं; उनके पते ठीक हैं या नहीं।
तारा और इन्द्रनाथ ने ग्यारह स्थानों पर जाँच की। तीन जगहों पर इंस्पेक्टर के बीस–बीस रुपये रिश्वत लेने की शिकायतें मिली। दो पतों पर मशीन पाने वाले थे ही नहीं। [12] यशपाल की मान्यता है कि समाज की उन्नति के लिए सामाजिक समस्याओं का अध्ययन किया जाना चाहिए। इस संबंध में कहने की आवश्यकता नहीं है। अभावग्रस्त, उपेक्षित, अक्षम, कुव्यवस्थित तथा अव्यवस्थित लोगों की सहायता तथा रक्षा समाज को ही करनी है। जिस पर केन्द्र के अध्यक्ष वर्मा बहुत चिढ़ते हैं और कनक से रुखाई से बात करते हैं – ''आप प्रति सप्ताह रविवार दो रात के लिए अपनी ड्यूटी छोड़कर सैर के लिए दिल्ली नहीं जा सकती। सरकारी नौकरी चौबीस घंटे तीस दिन की है। बिना अनुमति के आप स्थान छोड़कर नहीं जा सकती। छुट्टी विश्राम के लिए है, बाहर जाने के लिए नहीं।'' [13]
'दिव्या' उपन्यास में जातीय संघर्ष की पीड़ा देखिये – सागल के मधुपर्व में जब शस्त्र–कौशल की प्रतियोगिता का कार्यक्रम हुआ था तब उसमें दास महाश्रेष्ठी का पुत्र आयुष्मान पृथुसेन खड्गधारी प्रतियोगिता में विजय प्राप्त कर सर्वश्रेश्ठ खड्गधारी का सम्मान प्राप्त करता है। इस समारोह में महासेनापति द्वारा यह घोषणा की जाती है कि नगरश्री देवी मल्लिका की शिष्याओं में जो युवती हाथों की प्रतियोगिता में 'सरस्वती पुत्री' का सम्मान प्राप्त करेगी, वही अपने हाथों यह मुकुट सर्वश्रेष्ठ खड्गधारी को प्रदान करेगी। [14]
सांगल की प्रथानुसार 'सरस्वती–पुत्री' का सम्मान पाने वाली युवती की पुष्पों से आच्छादित शिविका अभिजात वंश के युवक अपने कन्धों पर युवती के गृहद्वार तक ले जाते थे। कुमारी दिव्या अपने प्रपितामह, पितृव्यों, भाइयों और सम्बन्धियों से आशीर्वाद और स्नेह पाकर संकोच से षिविका पर बैठ गयी। अभिजात वंश के युवक उसकी शिविका के दण्डों की ओर बढ़े चार दण्डों में सोलह से अधिक कन्धों के लिये स्थान न थी।
शिविका के अग्र दण्ड में पहिले से कन्धा दिये पृथुसेन को धकेल कर कुमार वसुधीर ने स्थान लेना चाहा। पृथुसेन ने अपना स्थान न छोड़ने का आग्रह किया।
गणपरिषद् के संवाहक आचार्य प्रवर्धन के पुत्र, वसुधीर के ज्येष्ठ आयुष्मान रुदधीर ने ललकारा–''दास–पुत्र को अभिजात वंश के युवकों के साथ शिविका में कन्धा देने का अधिकार नहीं है। [15]
प्रयुक्त समाज–शास्त्र का काम यह है कि वह ऐसे समाज की पुनः रचना करे। लक्ष्य है कि 1. स्वतंत्र समाज में चिन्तन की विविधता हो; 2. आर्थिक और शिक्षणात्मक असमानताओं को दूर कर समान अवसर प्रदान किये जाये; 3. कोई समूह–विशेष किसी विशेष सुविधा का शोषण न करे; 4. ऐसी सामाजिक व्यवस्था हो कि जिसमें सामाजिक बुद्धि, वैभव, सामाजिक कार्यदक्षता तथा

ऐच्छिक सहयोग से समाज के आर्थिक सुधार में अधिक से अधिक भलाई हो सके।'' [16]

यशपाल ने इन्हीं उपायों को आर्थिक समस्याओं के निराकरण से जोड़ा है।

भूषण एम0ए0 में पढ़ रहा था और मनोरमा एम0ए0 में थी। भूषण ने बहुत योग्यता से बी0ए0 पास किया था। उसे आशा था कि उतनी ही योग्यता से एम0ए0 पास करके वह किसी भी कॉलेज में अध्यापक की जगह पा लेगा। प्रोफेसर के जीवन में धन अधिक न सही, सम्मान और आराम तो है। आदमी सही सीढ़ी पर कदम रख लेने पर निश्चय ही दैन्य–दारिद्रय की बाढ़ से सुरक्षित जगह में पहुँच सकता है। [17]

निष्कर्ष

यशपाल के उपन्यासों का लक्ष्य मानव सुधार है और होना भी चाहिए तथा दूसरी ओर इनका सम्बंध आर्थिक सुधार से ही है। प्रोफेसर डेविस का मत है, ''हम समाज को उसके वर्तमान से अधिक अच्छा बनाना चाहते है। सम्भव है कुछ ऐसे भी नागरिक हो जो संतुष्ट हो और परिवर्तन न चाहते हों, परंतु उन्हें अनुचित महत्व नहीं देना चाहिए। समाज में जब तक ऐसे व्यक्ति है कि जो अनुभव करते हैं कि उन्हें न्याय नहीं मिल रहा है तथा उनके साथ न्यायपूर्ण व्यवहार नहीं किया जा रहा है, तब तक तो समाज के पुनर्निमाण की आवश्यकता है ही।

सदंर्भ

1. Richard C. Fuller and Richard Myers, "Some Aspects of a Theory of Social Problems" in American Sociology Review (February 1941), P.P. 24-32 and Weinburg S. Kirson, Social problems in our times 1960, 4.
2. Weinburg S. Kirson, Op-Cit (1960), P. 4
3. यशपाल, 'झूठा–सच' (वतन और देश भाग–1), पृ0 384
4. यशपाल, 'झूठा–सच' (वतन और देश भाग–1), पृ0 390
5. यशपाल, 'झूठा–सच' (वतन और देश भाग–1), पृ0 398
6. यशपाल, 'झूठा–सच' (वतन और देश भाग–1), पृ0 318
7. यशपाल, 'झूठा–सच' (देश का भविष्य भाग–1), पृ0 130
8. यशपाल, 'झूठा–सच' (देश का भविष्य भाग–1), पृ0 111
9. यशपाल, 'झूठा–सच' (देश का भविष्य भाग–1), पृ0 152
10. यशपाल, 'झूठा–सच' (देश का भविष्य भाग–1), पृ0 151
11. यशपाल, 'झूठा–सच' (देश का भविष्य भाग–1), पृ0 251
12. यशपाल, 'झूठा–सच' (देश का भविष्य भाग–2), पृ0 253
13. यशपाल, 'झूठा–सच' (देश का भविष्य भाग–2), पृ0 460–462
14. यशपाल, 'दिव्या', पृ0 8
15. यशपाल, 'दिव्या', पृ0 11–12
16. Davis J, Barnes HE. (Ed.), An Introduction to Sociology 1927, 699, 707.
17. यशपाल, 'मनुष्य के रूप', पृ0 55